ग्रामीण-नगरीय सातव्य
(RURAL-URBAN CONTINUUM)

गाँव एवं नगर को दो प्रमुख समुदाय माना जाता है। इन दोनों में विविध प्रकार से अन्तर किया जाता रहा है। औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व गाँव नगरों से पूरी तरह से भिन्न ही नहीं थे, अपितु इन दोनों में कोई विशेष सम्पर्क-सूत्र अथवा अन्तर्क्रियाएँ नहीं पाई जाती थीं। परन्तु जैसे-जैसे नगरीकरण एवं औद्योगीकरण की प्रक्रियाएँ प्रारम्भ हुईं, गाँव एवं नगर में पारस्परिक सम्पर्क में वृद्धि होती गई तथा दोनों में पाए जाने वाले अन्तर काफी कम होने लगे।

ग्रामीण एवं नगरीय समुदायों में बढ़ती हुई अन्तर्क्रियाओं तथा इनमें किए जाने वाले अन्तर की कठिनाइयों को देखते हुए आज ग्रामीण समाजशास्त्र में एक नवीन अवधारणा का विकास हुआ है, जिसे ग्रामीण-नगरीय सातव्य या निरन्तरता (Rural-Urban Continuum) कहा जाता है। जब बीसवीं शताब्दी में परिवर्तन की विभिन्न प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप ग्रामीण तथा नगरीय समुदायों में पाए जाने वाले अन्तर केवल सापेक्ष (Relative) हो गए (क्योंकि इनमें एक-दूसरे से पूर्णतः भिन्न लक्षण अब नहीं पाए जाते हैं) तो कुछ लोगों ने यह विचार प्रस्तुत किया कि दोनों ही प्रकार के समुदाय आज आपस में जुड़े हुए हैं तथा इनमें पृथकता के स्थान पर सातव्य या निरन्तरता पाई जाती है। यह अवधारणा इसी वास्तविकता को व्यक्त करने के प्रयासों का परिणाम है।

ग्रामीण-नगरीय सातव्य
(CONCEPT OF RURAL-URBAN CONTINUUM)

ग्रामीण-नगरीय सातव्य की अवधारणा ग्रामीण-नगरीय जीवन की निरन्तरता की द्योतक है तथा उन विद्वानों की विचारधारा के खण्डन के परिणामस्वरूप विकसित हुई है जो ग्रामीण एवं नगरीय जीवन-पद्धति को दो भिन्न प्रकार की व्यवस्थाएँ मानते हैं। उदाहरणार्थ, **विर्थ** ने ग्रामीण एवं नगरीय जीवन को दो पृथक प्रकार की जीवन-पद्धति माना है। इसी प्रकार के विचार **रेडफील्ड, सोरोकिन, जिमरमैन** आदि विद्वानों ने भी व्यक्त किए हैं तथा ग्रामीण एवं नगरीय विभेदों का श्रेणीकरण किया है। यह अवधारणा ग्रामीण-नगरीय भिन्नताओं को स्पष्ट न कर इन दोनों में पाई जाने वाली निरन्तरता पर बल देती है। वैसे भी हम व्यावहारिक रूप से यह स्पष्ट नहीं कर सकते कि गाँव कहाँ से प्रारम्भ होते हैं और कहाँ समाप्त होते हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से भी गाँव और नगर में किसी प्रकार की रेखा खींचना सरल कार्य नहीं है। उदाहरणार्थ, एक कस्बा गाँव और नगर में पाई जाने वाली निरन्तरता का द्योतक है।

Scanned with CamScanner

1960-70 के दशक में तीन ऐसी पुस्तकें प्रकाशित हुईं जिन्होंने विभिन्न विद्वानों का ध्यान ग्रामीण एवं नगरीय समुदायों में पाए जाने वाले सम्बन्धों की ओर आकर्षित किया। ये पुस्तकें इस प्रकार थीं–*(1) Dewey-'The Rural-Urban Continuum : Real but Relatively Unimportant' (1960), (2) Benet-'The Ideology of the Rural-Urban Continuum' (1963),* तथा *(3) Hauser-'Urban Rural Dichotomies as Forms of Western Ethnocentrism' (1965)*।

डिवे, बेनेट तथा **हौजर** ने उपर्युक्त पुस्तकों में यह विचारधारा प्रस्तुत की कि ग्रामीण-नगरीय सातव्य दोनों प्रकार के समुदायों को पृथक् करके अध्ययन पर बल देती है क्योंकि दोनों की प्रकृति में काफी अन्तर पाया जाता है। अनेक विद्वानों (जैसे **जिमरमैन** तथा **विर्थ** आदि) ने भी इस विचारधारा को अपना समर्थन प्रदान किया। परन्तु आज ग्रामीण समुदायों में विविध प्रकार के विकास कार्यक्रमों, अनेक नवीन संस्थाओं एवं साधनों (जैसे प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, स्कूल, यातायात के साधन, बैंक आदि) के प्रवेश, विभिन्न कल्याण सम्बन्धी गतिविधियों (जैसे अस्पृश्यता उन्मूलन, आरक्षण, भूमिहीन मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी आदि), नवीन राजनीतिक प्रक्रियाओं (जैसे पंचायती राज, नियमित रूप से विधानसभा एवं लोकसभा हेतु चुनाव आदि) के परिणामस्वरूप ग्रामवासियों की जीवन-शैली पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। इससे परम्परागत ग्रामीण सामाजिक संरचना (जोकि नगरीय संरचना से पूरी तरह से भिन्न थी) परिवर्तित हुई है। ग्रामवासियों के नगरीय समुदायों से निरन्तर सम्पर्क के कारण नगरीय विशेषताएँ ग्रामीण समाज में प्रवेश कर गई हैं। इन सबका परिणाम यह हुआ कि आज ग्रामवासियों का की जीवन-पद्धति से अलग करना कठिन हो गया है।

इसके अतिरिक्त, नगरों के निरन्तर विकास से सीमावर्ती ग्रामीण क्षेत्रों का तीव्रता से नगरीकरण हुआ है तथा सामाजिक जीवन में नेटवर्क (Network) की भूमिका बढ़ गई है। इनसे ग्रामीण एवं नगरीय समुदायों में आज यह निरन्तरता विकसित हुई है जो कि पहले कभी नहीं थी। ग्रामीण-नगरीय सातव्य की अवधारणा इसी परिवर्तित वास्तविकता को व्यक्त करती है। **बर्ट्रण्ड** और **सहयोगियों** के अनुसार, **"सातव्य सिद्धान्त के समर्थक यह अहसास कराते हैं कि ग्रामीण एवं नगरीय अन्तर केवल तुलनात्मक अंशों में ही होता है तथा इन दोनों ध्रुवों के बीच एक ऐसी शृंखला स्पष्ट होती है जो इन्हें एक दूसरे से जोड़ती है।"**

रीजमैन ने भी उन विद्वानों की कटु आलोचना की है जो ग्रामीण एवं नगरीय समुदायों में पाए जाने वाले अन्तरों को बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करते हैं। **रीजमैन** के शब्दों में, **"ग्रामीण-नगरीय अन्तर से सम्बन्धित तथाकथित सिद्धान्त विद्यार्थियों की पाठ्य पुस्तकों में ही सुरक्षित हैं तथा उनका महत्त्व केवल परीक्षा के समय ही होता है।" लेविस** के शब्दों में, **"ग्रामीण-नगरीय अन्तर के सम्बन्ध में अनुसंधान प्रविधियों के रूप में महत्ता कभी प्रमाणित नहीं हुई है।"** ग्रामीण-नगरीय सातव्य की अवधारणा आधुनिक युग में ग्रामीण-नगरीयवाद के विकास अर्थात् गाँवों और नगरों में बढ़ती हुई अन्तर्क्रिया के परिणामस्वरूप विकसित हुई है। अंग्रेजी शासनकाल में भारतीय गाँवों में परिवर्तन की प्रक्रिया आरम्भ हुई। औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं नगरीयवाद, आवागमन एवं संचार के विकसित साधन, पश्चिमीकरण, आधुनिक शिक्षा, नियोजित कार्यक्रमों आदि के प्रभाव से शान्त ग्रामीण जीवन में परिवर्तन की प्रक्रिया ही प्रारम्भ नहीं हुई अपितु गाँवों एवं नगरों में पारस्परिक सम्पर्क में भी वृद्धि हुई।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ग्रामीण-नगरीय सातव्य की अवधारणा ग्रामीण एवं

Scanned with CamScanner

नगरीय समुदायों में पाई जाने वाली निरन्तरता से सम्बन्धित है तथा इस बात पर बल देती है कि गाँवों एवं नगरों में पाए जाने वाले अन्तर निरपेक्ष न होकर सापेक्ष एवं केवल मात्रा के होते हैं। भारतीय समाज के सन्दर्भ में आज यह अवधारणा पूरी तरह से लागू होती है। आज ग्रामीण समुदायों की विशेषताएँ नगरीय समुदायों में तथा नगरीय समुदायों की विशेषताएँ ग्रामीण समुदायों में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं।

Scanned with CamScanner

ग्रामीण-नगरीय सम्पर्क-सूत्र
(RURAL-URBAN LINKAGES)

एस.सी. दुबे के अनुसार गाँव मान्य एवं स्थायी पारस्परिक सम्बन्धों द्वारा आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से एक एकीकृत समुदाय है। गाँव के अधिकांश लोग कृषि या इससे सम्बन्धित कोई अन्य व्यवसाय करते हैं। कृषि ही इनकी आजीविका का प्रमुख साधन है। प्राचीन काल से लेकर अंग्रेजी शासनकाल से पहले तक गाँवों में इन्हीं लक्षणों की प्रमुखता थी। परन्तु अंग्रेजी शासनकाल तथा स्वतन्त्रता के पश्चात् ग्रामीण समाज में अनेक परिवर्तन हुए हैं जिनसे गाँव की परम्परागत सामाजिक संरचना में बदलाव आया है।

गाँवों की निम्नलिखित दो दृष्टियों से विवेचना की जा सकती है–

1. **गाँव का विस्तृत जगत से सम्पर्क नहीं है–रोबर्ट रेडफील्ड** ने गाँव को लघु समुदाय (Little Community) कहा है तथा इसकी चार प्रमुख विशेषताएँ बताई हैं–(i) विशिष्टता (Distinctiveness), (ii) लघुता (Smallness), (iii) सजातीयता या एकरूपता (Homogeneity), तथा (iv) आत्म-निर्भरता (Self-sufficiency)।

2. **गाँव का विस्तृत जगत से सम्पर्क रहा है–एम. एन. श्रीनिवास** ने आधुनिक भारत के गाँव के सन्दर्भ में यह कहा है कि पूर्ण रूप से स्वावलम्बी ग्राम गणतन्त्र एक कल्पना मात्र है, वह सदैव एक वृहत सत्ता का हिस्सा रहा है। **ब्रज राज चौहान** ने ऐसे पाँच आधार बताएँ हैं जिन्होंने गाँवों को बाह्य जगत से जोड़ रखा था–(i) सामाजिक सम्पर्क-सूत्र, (ii) आर्थिक सम्पर्क-सूत्र, (iii) धार्मिक सम्पर्क-सूत्र, (iv) राजनीतिक सम्पर्क-सूत्र, तथा (v) सांस्कृतिक सम्पर्क-सूत्र।

Scanned with CamScanner

समसामयिक भारत में ग्रामीण-नगरीय सम्पर्क-सूत्रों के गहनीकरण के लिए उत्तरदायी कारक
(FACTORS RESPONSIBLE FOR INTENSIFICATION OF RURAL-URBAN LINKAGES IN CONTEMPORARY INDIA)

ग्रामीण-नगरीय सम्पर्क-सूत्रों एवं अन्तर्क्रियाओं के बढ़ने से नए सम्बन्धों के प्रतिमान उभर रहे हैं तथा उनसे जो समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं उनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है–

1. सहयोगी तथा शोषक सम्बन्धों का प्रादुर्भाव (Emergence of Co-operative as well as Exploitative Relationships)–ग्रामीण-नगरीय सम्पर्क सूत्रों एवं अन्तर्क्रियाओं के परिणामस्वरूप सम्बन्धों के जो प्रतिमान उभरे हैं वे सहयोगी भी हैं और शोषक भी हैं। सहयोग की दृष्टि से यदि देखा जाए तो नवीन संस्थाओं एवं संरचनाओं ने ग्रामीणों के जीवन में विकास के नए अवसरों को प्रस्तुत किया है और परम्परागत शोषकों जैसे जमींदार या साहूकार वर्ग का वर्चस्व समाप्त हुआ है। परन्तु साथ ही, कुछ अधिकारीगण या नए ठेकेदार जनजाति के लोगों या गाँव के लोगों का शोषण भी कर रहे हैं। इनके सम्पर्क अधिकतर समृद्ध किसानों से ही हैं।

2. जीवन-निर्वाह के ढंगों में परिवर्तन (Changes in Modes of Subsistence)–ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भारी परिवर्तन हुआ है। गाँवों में खेती का व्यवसायीकरण हुआ है। नए बीज, नई रसायनिक खादों व ट्रैक्टरों, जल पम्पों के प्रयोग ने परम्परागत तरीकों को बिल्कुल बदल दिया है। अब नकद फसलों का प्रचलन बढ़ गया है। इससे ग्रामीणों की शहरों पर निर्भरता बढ़ी है।

3. मध्यस्थों एवं बिचौलियों के एक नए वर्ग का उदय (Emergence of a new class of Middle Men or Intermediaries)–ग्रामीणों के बीच ऐसे लोगों का उदय हो गया है जो उनके और अधिकारीतन्त्र या विकासतन्त्र के बीच 'सम्पर्क' या बिचौलियों का कार्य करते हैं। ये मध्यस्थ न केवल शक्तिशाली हो जाते हैं वरन् भ्रष्टचारीतन्त्र को बनाए रखने के भी आधार हैं। विकास कार्यक्रमों से होने वाले लाभों में इस अनुत्पादक मध्यस्थ वर्ग के लाभांश का हिस्सा काफी बड़ा है।

4. राजनीतिक प्रक्रिया की अन्य प्रक्रियाओं पर प्राथमिकता (Priority of Political Proeess over other Processes)–परम्परागत रूप से लगभग अराजनीतिक ग्रामीण समुदायों का राजनीतिकरण इस तरीके से हो रहा है कि राजनीतिक प्रक्रियाओं का अन्य सभी आर्थिक-सामाजिक प्रक्रियाओं पर प्रभुत्व बढ़ रहा है। राजनीतिक सम्बन्ध शक्ति और सत्ता के प्रमुख आधार बन रहे हैं। राजनेताओं को भी गाँवों या जनजातियों में अपने कार्यसमूह बनाने पड़ते हैं। अत: वे सुरक्षा और संरक्षण द्वारा इन समुदायों में गुटबन्दी को बढ़ावा देते हैं ताकि उनका इन पर प्रभाव का शिकंजा कसा रहे। ऐसे वातावरण में असामाजिक तत्वों को भी राजनीति में प्रवेश करने का मौका मिला है। ग्रामीण क्षेत्रों का राजनीतिक वातावरण प्रदूषित और विस्फोटक हुआ है।

5. संयुक्त परिवार, नातेदारी एवं जजमानी व्यवस्था की भूमिका का ह्रास (Decline of the role of Joint Family, Kinship and Jajmani System)–संयुक्त परिवार, नातेदारी एवं जजमानी व्यवस्था ग्रामीण जीवन की आधारभूत सामाजिक संस्थाएँ रही हैं। वे ही

Scanned with CamScanner

सामाजिक सुरक्षा व बीमे का कार्य भी करती थीं। जजमानी व्यवस्था रोजगार की गारन्टी देने वाली संस्था थी। ग्रामीण-नगरीय अन्तर्क्रियाओं के परिणामस्वरूप इन संस्थाओं के महत्त्व और सामाजिक भूमिका में ह्रास हुआ है। अर्थव्यवस्था के द्रव्यीकरण ने भी इस ह्रास में योगदान दिया है। रोजगारों की तलाश में हजारों लोग गाँवों से नगरों में आ रहे हैं और यहीं बस रहे हैं।

6. नगरवाद का गाँवों की ओर प्रसार (Urbanism invades Countryside)–ग्रामीण क्षेत्रों में नगरवाद का प्रभाव बढ़ रहा है। गाँव में टी-स्टाल खुले हैं और विवाह-शादी में भी शहरों की तरह ही तड़क-भड़क वाला और स्टैन्डिग खाने का कार्यक्रम रखा जाता है और दहेज आदि का सामान दिया जाने लगा है। घरों की साज-सज्जा एवं खान-पान पर भी प्रभाव पड़ा है।

7. जातीय व जनजातीय संघों का प्रादुर्भाव (Emergence of Caste and Tribal Associations)–आजकल अनेक जनजातियों के भी संघ विकसित हो गए हैं। ये संघ हित-समूहों के रूप में कार्य कर रहे हैं। इनका राजनीतिक स्वरूप स्पष्ट दिखाई देता है। ये संघ जनजातीय या जातीय यूनियनों की तरह कार्य करते हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि ग्रामीण-नगरीय सम्पर्क-सूत्रों ने भारतीय सामाजिक परिदृश्य को काफी सीमा तक प्रभावित एवं परिवर्तित किया है। इनके सकारात्मक एवं ऋणात्मक दोनों ही प्रकार के परिणाम हुए हैं। गाँव एवं नगर में सम्पर्क एवं अन्तर्क्रिया तो होनी ही चाहिए। विकास के लाभों में सहभागिता का अधिकार तो सभी का है। शोषण के स्रोत निरसन्देह बन्द किए जाने चाहिए। साथ ही, प्रतिबन्धों एवं नियन्त्रणों की व्यवस्था का भी निर्माण किया जाना चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ग्रामीण-नगरीय सातव्य की अवधारणा ग्रामीण एवं नगरीय समुदायों में पाई जाने वाले निरन्तरता से सम्बन्धित है तथा इस बात पर बल देती है कि गाँवों एवं नगरों में पाए जाने वाले अन्तर निरपेक्ष न होकर सापेक्ष एवं केवल मात्र के होते हैं। **भारतीय समाज के सन्दर्भ में आज यह अवधारणा पूरी तरह से लागू होती है।** भारत में पिछले तीन दशकों के दौरान यातायात के साधनों तथा सड़क संचार का बहुत विकास हुआ है। सड़कों तथा संचार के साधनों का विस्तार दुर्गम जनजातीय क्षेत्रों, गाँवों और नगरीय केन्द्रों तक बड़ी तेजी से अल्प अवधि में सम्पन्न हुआ है। नए-नए काम-धन्धों तथा आधुनिक शैक्षिक संस्थाओं ने ग्रामवासियों को आकर्षित किया है। यही कारण है कि बड़े पैमाने पर ग्रामीण क्षेत्रों से लोग रोजगार और शिक्षा की तलाश में नगरों की ओर पलायन कर रहे हैं। फलस्वरूप जनजातीय क्षेत्रों, गाँवों तथा शहरों के बीच पृथक्करण कम हो रहा है। अब दूरस्थ जनजातीय क्षेत्रों, में भी नगरीवाद, जनजातीय तथा ग्रामीण संस्कृति के मिले-जुले लक्षण प्रकट हो रहे हैं। क्योंकि जनजातीय व ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों में लोगों के आव्रजन से अप्रवासी लोगों ने नगरीय संस्कृति को अपना लिया है। इस प्रकार के अनुकूलन के परिणामस्वरूप उनमें मिली-जुली संस्कृति के लक्षण देखने को मिलते हैं।

आज ग्रामीण समुदायों की विशेषताएँ नगरीय समुदायों में तथा नगरीय समुदायों की विशेषताएँ ग्रामीण समुदायों में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। जो ग्रामवासी गाँव छोड़कर नगरों में आकर बस जाते हैं उनमें से कुछ अपनी ग्रामीण जीवन-शैली को नगरों में रहते हुए भी बनाए रखते हैं। इसी प्रकार, बहुत से ग्रामवासी नगरीय समुदायों से इतना अधिक जुड़ गए हैं कि वे

Scanned with CamScanner